mardi 10 avril 2012

HIN2B-09C

(Initiation à la littérature hindi moderne)

Cours-10

नई कहानी - महेंद्र फुसकेले

...

'देहाती rural जीवन की अभिव्यक्ति f expression और साधारण मध्यवर्गीय de classe moyenne समाज का चित्रण m description जिस यथार्थ f réalité भूमि f terrain पर नई कहानी में हुआ है वह पहले नहीं हुआ था। वैसे नई कहानी को गांव m village की कहानी कहना उसे वस्तु-कथ्य m ce qui est dit की दृष्टि f vue से सीमित करना limiter है। जो सही correcte और उचित juste नहीं है।' हिन्दी में नई कहानी का आंदोलन मूलत: à la base प्रगतिशील progressiste लेखकों ने शुरु किया था। ...

नई कहानी के विख्यात bien connu समीक्षक m critique नामवर सिंह का मत है कि 'कहानी में जो चीज पहले कथानक m intrigue के नाम से जानी जाती थी, उसमें कहीं न कहीं कोई मौलिक original परिवर्तन m changement हुआ है। इसे यों भी कह सकते हैं कि कथानक की धारणा f (कन्सेप्ट concept) बदल गई है। किसी समय मनोरंजक divertissant, नाटकीय théâtral और कुतुहलपूर्ण curieux घटनाf-संघटनm composition de l'événement को ही कथानक समझा जाता था और आज घटना-संघटना इतनी विघटित effrité हो गयी है कि लोगों को अधिकांश la plupart कहानियों में 'कथानक' नाम की चीज मिलती ही नहीं है। इसी को कुछ लोग 'कथानक' का 'ह्रास' m déclin कहते हैं। परंतु वास्तविकता f réalité यह है कि ह्रास कथानक intrigue का नहीं, बल्कि 'कथा' f histoire का हुआ है और जीवन का एक लघु प्रसंग m contexte/épisode, प्रसंग खंड m partie, मूड m humeur, विचार m pensée अथवा ou विशिष्ट particulier व्यक्ति-चरित्र le caractère de la personne ही कथानक बन गया है, अथवा उसमें कथानक की क्षमता f capacité मान ली गई है। ...'

नई कहानी लिखकर पाठकों के बड़े समूह m groupe की सराहना f éloge बटोरने ramasser वाले नये कथाकार भीष्म साहनी, मन्नू भंडारी, अमरकांत, काशीनाथ सिंह, भैरव प्रसाद गुप्त, मार्कन्डेय, अब्दुल बिस्मिल्लाह, स्वयं प्रकाश, रवींद्र कालिया, ज्ञानरंजन और कृष्णा सोबती (noms des écrivains) की नयी पीढ़ी f génération भी अपनी नयी कहानियों से कथाf सागरm l'océan des nouvelles में उतरे। उनकी कहानियाँ मोहन राकेश की व्याख्या m commentaire के चौखटे m cadre में अवश्य फिट नहीं बैठती हैं। इनमें से ज्यादातर कहानियों में ग्रामीण परिवेश m environnement देखने में नहीं आता। शहरी urbain मध्यवर्ग के स्त्री-पुरुषों की नितांत absolu वैयक्तिक जिंदगी m vie ही चित्रित décrit हुई है। ...

(Deux passages de la nouvelle qui illustrent le paragraphe en exergue ci-dessus.) मिस पाल - मोहन राकेश

...

जिन दिनों मिस पाल ने त्यागपत्र दिया, मैं दिल्ली में नहीं था। लम्बी छुट्टी लेकर बाहर गया था। मिस पाल के नौकरी छोड़ने का कारण मैं काफी हद तक जानता था। वह सूचना विभाग में हम लोगों के साथ काम करती थी और राजेन्द्रनगर में हमारे घर से दस-बारह घर छोड़कर रहती थी। दिल्ली में भी उसका जीवन काफी अकेला था, क्योंकि दफ्तर के ज्यादातर लोगों से उसका मनमुटाव था और बाहर के लोगों से वह मिलती बहुत कम थी। दफ्तर का वातावरण उसके अपने अनुकूल नहीं लगता था। वह वहाँ एक-एक दिन जैसे गिनकर काटती थी। उसे हर एक से शिकायत थी कि वह घटिया किस्म का आदमी है, जिसके साथ उसका बैठना नहीं हो सकता।

"ये लोग इतने ओछे और बेईमान हैं," वह कहा करती, "इतनी छोटी और कमीनी बातें करते हैं कि मेरा इनके बीच काम करो हर वक्त दम घुटता रहता है। जाने क्यों ये लोग इतनी छोटी-छोटी बातों पर एक-दूसरे से लड़ते हैं और अपने छोटे-छोटे स्वार्थों के लिए एक-दूसरे को कुचलने की कोशिश करते रहते हैं।"

मगर उस वातावरण में उसके दुखी रहने का मुख्य कारण दूसरा था, जिसे वह मुँह से स्वीकार नहीं करती थी। लोग इस बात को जानते थे, इसलिए जान-बूझकर उसे छोड़ने के लिए कुछ-न-कुछ कहते रहते थे। बुखारिया तो रोज़ ही उसके रंग-रूप पर कोई न कोई टिप्पणी कर देता था।

'क्या बात है मिस पाल, आज रंग बहुत निखर रहा है !"

दूसरी तरफ वह जोरावरसिंह बात जोड़ देता, "आजकल मिस पाल पहले से स्लिम भी तो हो रही है।"

मिस पाल इन संकेतों से बुरी तरह से परेशान हो उठती और कई बार ऐसे मौके पर कमरे से उठकर चली जाती। उसकी पोशाक पर भी लोग तरह-तरह की टिप्पणियाँ करते रहते थे। वह शायद अपने मुटापे की क्षतिपूर्ति के लिए बाल छोटे कटवाती थी और बनावसिंगार से चिढ़ होने पर भी रोज काफी समय मेकअप पर खर्च करती थी। मगर दफ्तर में दाखिल होते ही उसे किसी न किसी मुंह से ऐसी बात सुनने को मिल जाती थी, "मिस पाल, नई कमीज की डिजाइन बहुत अच्छा है। आज तो गजब ढा रही हो तुम !"

…(2ème passage)

"तुम रुको, मैं अभी आ रही हूँ। तुम उतनी देर में अपना सामान निकलवाकर ऊपर रखवाओ।

मेरा मन उस समय न जाने कैसा हो रहा था, फिर भी मैंने अंदर से अपना सामान निकलवाया और बस की छत पर रखवा दिया। मिस पाल तब तक टिकटघर के बाहर ही खड़ी थी। शनिवार होने के कारण उस दिन स्कूल में जल्दी छुट्टी हो गई थी और बहुत-से बच्चे बस्ते लटकाए सुलतानपुर की पहाड़ी से नीचे आ रहे थे। कई बच्चे बस की सवारियों को देखने के लिए वहाँ आसपास जमा हो रहे थे। मिस पाल उस समय प्याजी रंग की सलवार-कमीज पहने थी और ऊपर काला दुपट्टा लिए थी। उन कपड़ों की वजह से उसका शरीर पीछे से और भी फैला हुआ लगता था। बच्चे एक-दूसरे से आगे होते हुए टिकटघर के नजदीक जाने लगे। मिस पाल टिकटघर की खिड़की पर झुकी हुई थी। एक लड़के ने धीरे-से आवाज लगाई, "कमाल है भई कमाल है !"

इस पर आसपास खड़े बहुत-से बच्चे हँस दिए। मुझे लगा जैसे किसी ने मेरे भारी मन पर एक और बड़ा पत्थर डाल दिया हो। बच्चे सबके सब टिकटघर के आसपास जमा हो गए थे और आपस में खुसर-पुसर कर रहे थे। मैं उनसे कुछ कह भी नहीं सकता था, क्योंकि उससे मिस पाल का ध्यान खामखाह उनकी तरफ चला जाता। मैं उधर से अपना ध्यान हटाकर दरिया की तरफ से आते हुए लोगों को देखने लगा। फिर भी बच्चों की खुसर-पुसर मेरे कानों में पड़ती रही। दो लड़कियाँ बहुत धीरे-धीरे आपस में बात कर रही थीं, "मर्द है।"

"नहीं, औरत है।"

"तू सिर के बाल देख, बाकी शरीर देख। मर्द है।"

"तू कपड़े देख, और सब कुछ देख। औरत है।"

"आओ, बच्चो आओ, पास आकर देखो," मिस पाल की आवाज से मैं जैसे चौंक गया। मिस पाल टिकट लेकर खिड़की से हट आई थी। बच्चे उसे आते देखकर 'आ गई, आ गई' कहते भाग खड़े हुए। एक बच्चे ने सड़क के उस तरफ जाकर फिर जोर से आवाज लगाई, "कमाल है भई कमाल है !"

मिस पाल सड़क पर आकर कई कदम बच्चों के पीछे चली गई।

"आओ बच्चों, यहाँ हमारे पास आओ," वह कहती रही, "हम तुम्हें मारेंगे नहीं, टॉफियाँ देंगे। आओ..."

मगर बच्चे पास आने के बजाय और भी दूर भाग गए। मिस पाल कुछ देर सड़क के बीच रुकी रही, फिर लौटकर मेरे पास आ गई। उस समय उसके चेहरे का भाव बहुत विचित्र लग रहा था। उसकी आँखों में आए हुए आँसू नीचे गिरने को हो रहे थे और उन्हें झुठलाने के लिए एक फीकी हँसी का प्रयत्न कर रही थी। उसने अपने ओठों को जाने किस तरह काटा था कि एकाध जगह से उसकी लिपस्टिक नीचे फैल गई थी। उसकी घिसी हुई कमीज की सीवनें कंधे के पास से खुल रही थीं।

"खूबसूरत बच्चे थे; नहीं?" उसने आँखें झपकाते हुए कहा।

मैंने उसकी बात का समर्थन करने के लिए सिर हिलाया तो मुझे लगा कि मेरा सिर पत्थर की तरह भारी हो गया है। उसके बाद मेरी समझ में कुछ नहीं आया कि मिस पाल मुझसे क्या कह रही है और मैं उससे क्या बात कर रहा हूँ; जैसे आँखों और शब्दों के साथ विचारों का कोई संबंध ही नहीं रहा था। मुझे इतना याद है कि मैंने मिस पाल को टिकट के पैसे देने का प्रयत्न किया, मगर वह पीछे हट गई और मेरे बहुत अनुरोध करने पर भी उसने पैसे नहीं लिए। मगर किस अवचेतन प्रक्रिया से हम लोगों के बीच अब तक बातचीत का सूत्र बना रहा, यह मैं नहीं जान सका। मेरे कान उसे बोलते सुन रहे थे और अपने को भी। परन्तु वे जैसे दूर की ध्वनियाँ थीं - अस्फुट, अस्पष्ट और अर्थहीन। जो बात मैं ठीक से सुन सका वह यही थी, "और वहाँ जाकर रणजीत, दफ्तर में मेरे बारे में किसी से बात मत करना। समझे ? तुम्हें पता ही है कि वे लोग कितने ओछे हैं। बल्कि अच्छा होगा कि तुम किसी को यह भी न बताओ कि तुम मुझे यहाँ मिले थे। मैं नहीं चाहती कि वहाँ कोई भी मेरे बारे में कुछ जाने या बात करे। समझे।"

बस तब स्टार्ट हो रही थी और मैं खिड़की से झाँककर मिस पाल को देख रहा था। बस चली तो मिस पाल हाथ हिलाने लगी। दोनों खाली डिब्बे वह अपने हाथों में लिए हुए थी। मैंने भी एक बार उसकी तरफ हाथ हिलाया और बस के मुड़ने तक हिलते हुए खाली डिब्बों को ही देखता रहा।